पुराणों में वर्णित नैतिक आचरण के आयाम

Dimensions of ethical conduct described in the Puranas

Dr. Santosh Swami
Principal, marudhara college, 15JDW, Hanumangarh, Rajasthan, India
principal@marudharacollege.ac.in

ABSTRACT

पुराण भारत का सच्चा इतिहास है। पुराणों से ही भारतीय जीवन का आदर्श भारत की सभ्यता संस्कृति तथा भारत के विद्या वैभव के उत्कर्ष का वास्तविक ज्ञान प्राप्त होता है।
पुराण भारतीय इतिहास के वास्तविक स्त्रोत है। पुराणों में देनिक जीवन से लेकर अध्यात्मिक उन्नति तक मार्ग प्रशस्त किया गया है पुराणों में जीवन का परम लक्ष्य भगवत प्राप्ति को माना गया है। और इस भगवान को प्रसन्न करने के लिए नैतिक आचरण को उसका मेरुदंड माना गया है।
पुराणों में वर्णित उतम उपदेश से मानव के जीवन को पवित्र बनाया गया है। पुराणों में उन तीनो ही प्रकार के उपदेशो का भंडार है जो व्यक्ति को कल्याण मार्ग की ओर ले जाते है।
पुराणों की रचना संव्य भगवान नारायण ने व्यास रूप में अवतरित होकर की है। पुराणों के पठन और श्रवण से लोगो का पाप नष्ट टो होता ही है व्यक्ति को धर्म और अधर्म का भी ज्ञान होता है।

Puranas are the true history of India. It is from the Puranas that the ideal of Indian life, the real knowledge of the civilizational culture of India and the flourishing of India's education, is obtained.
Puranas are the real sources of Indian history. In the Puranas, the path has been paved from daily life to spiritual progress. In the Puranas, the ultimate goal of life is considered to be attainment of God. And in order to please this Lord, ethical conduct has been considered as his backbone.
Human life has been made holy by the best teachings described in the Puranas. In the Puranas there is a storehouse of those three types of teachings which take a person towards the path of welfare.
The creation of the Puranas is done by Lord Narayan incarnate in the form of Vyasa. The sins of the people are destroyed by reading and listening to the Puranas, the person also has knowledge of religion and adharma.

मुख्य शब्द: पुराण, अध्यात्मिक, नैतिक, मेरुदंड, अवतरित, धर्म,सभ्यता।

प्रस्तावना

ऋषिवर व्यास द्वारा प्रणीत पुराण वाङमय वेद प्रतिपादित तत्व रहस्यों का सहजतया प्रकाशक है। मानव जीवन के लिए जो सबसे उपादेय लोक और परलोक का साधन पंथ है उसे ही पुराणों में विविध आख्यानों के माध्यम से बतलाया गया है।
पुराणों में आचार के बारे में बताते हुए कहा गया है कि जीवन में श्रेष्ठ आचार ही मानवता के शीर्ष मानदंड है। इस बात के द्वारा पुराणों में बड़े विस्तार से मनुष्य के आचरणगत शुचिता का दिग्दर्शन कराया गया है। पुराणों में मनुष्य के जीवन के प्रत्येक पक्ष को व्यास जी द्वारा व्यक्त किया गया है। जीवन का कोई भी ऐसा पक्ष नहीं है जो व्यास जी की दृष्टि से तिरोहित न हुआ हो यह तो प्रसिद्ध है कि–

अष्टादश पुराणेषु व्यासस्य वचन द्वय ।
परोपकार पुण्याय पापाय परपीडनम् ।।

अर्थात किसी भी प्रकार से दूसरे की भलाई की जाये उससे बड़ा कोई पुण्य नहीं है और किसी को संताप पहुंचाया जाए इससे बड़ा कोई पाप नहीं है। यही अठारह पुराणों में वर्णित तथ्यों का सार है।
सत्य, अहिंसा, करुणा, दया, सेवा, सहयोग, मित-भाषण, विनयशीलता, माता, पिता गुरु एवं बड़ों के प्रति समादर, ऐसे न जाने कितने नैतिक आचरण परक तथ्य है जिनका विविध पुराणों में बहुधा उल्लेख हुआ है यह कहना समीचीन ही होगा कि यह पुराण वाङ्मय मानवता की ऐसी ख्याति है जिनके द्वारा कोई भी व्यक्ति सामान्य से विशिष्ट होकर उत्तरोत्तर अभ्युत्थान के शीर्ष सोपान पर पहुंच सकता है तथा अपने जीवन के निरुश्रेय को प्राप्त कर सकता है

पुराणों में प्रतिपादित नैतिक आचार दृव्यवस्था

पुराणों में आचार पर बहुत सूक्ष्म विचार किया गया है । पुराणों में कहा गया है कि जो मनुष्य आचारवान है उन्हें दीर्घायु धन,संतति,सुख और धर्म की प्राप्ति होती है ।
आचरण को प्रमुख मानते हुए कहा गया है:-

आचारहीन न पुनन्ति वेदा: ।

अर्थात आचारणहीन मनुष्य को वेद भी पवित्र नहीं कर सकता है। अपवित्र व्यक्ति द्वारा अनुष्ठित धर्म निष्फल सा होता है। अतः मनुष्य जीवन की सफलता के लिए नैतिक आचरण का होना अत्यंत आवश्यक है ।
नैतिक आचरण के अंतर्गत काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद, मात्सर्य ईर्ष्या, राग-द्वेष, झूठ, कपट, छ्ल, छ्दम, दम्भ आदि असत आचरणों का त्याग तथा सत्य, अहिंसा, दया, परोपकार, क्षमा धृति इंद्रिय निग्रह, अक्रोध आदि सत आचरणों का ग्रहण मुख्य है ।
देवी भागवत में कहा गया है कि –

आचारवान सदा पूतरू सदैवाचरवान सुखी
आचारवान सदा धन्यरू सत्यं सत्यं च नारद ।।

(क) दैनिकचर्या का पालन:-

मनुष्य के जीवन में प्रातः काल से लेकर रात्रि में शयनपर्यंतक दैनिक कार्यक्रमों का पर्याप्त महत्व है। मनुष्य की इस दैनिकचर्या को भी नैतिक आचरण के अंतर्गत ही परिगणित किया गया है। कूर्म पुराण में व्यक्ति की दैनिकचर्या को बताते हुए व्यास जी कहते हैं-

ब्राह्मो मुहूर्ते उत्थाय धर्ममर्थ चिन्तेयत
काया क्लेश तदुद्भूत ध्यायीत मनसेश्वरम ।

ब्रह्ममुहूर्त में उठकर धर्म और अर्थ एवं उनकी सम्पन्नता के लिए अपेक्षित शारीरिक आयास (अथार्त क्या कब कैसे करना है आदि) का चिंतन करें तथा मन में ईश्वर का ध्यान करें । बुद्धिमान मनुष्य को उषाकाल होने पर आवश्यक कर्मों को करके विधिपूर्वक शोच आदि से निवृत होकर शुद्ध जलवाली नदियों में स्नान करना चाहिए। क्योंकि प्रातः स्नान करने से पाप करने वाले व्यक्ति भी पवित्र हो जाते हैं । इसलिए मनुष्य को सभी प्रकार के प्रयत्नों द्वारा प्रातः कालीक स्नान करना चाहिए । अतः मन की शुद्धि के लिए सर्वप्रथम स्नान का विधान है। मंत्रवेता विद्वान पुरुष को ॐ" नमो नारायणय" इस मूल मंत्र के द्वारा उस जल में तीर्थ भावना की कल्पना करनी चाहिए।

(i) संध्योपासना:-

व्यक्ति के जीवन में संध्योपासना का विशिष्ट महत्व है । पुराणों में संध्यौपसना को बताते हुए व्यास जी कहते हैं:-

या संध्या सा जगत्सूतिमर्यातीता हि निष्कला ।
एश्वरी तु पराशक्ति स्तत्वत्रय समुद्रा ।।

जो संध्या है वही जगत को उत्पन्न करने वाली है मायातीत है निष्कला है और तीन तत्वों से उत्पन्न होने वाली ईश्वर की पराशक्ति है। विद्वान ब्राह्मण को पूर्वाभिमुख होकर सूर्यमंडल में प्रतिष्ठित सावित्री का ध्यानपूर्वक जप करते हुए संध्योपासना करनी चाहिए। संध्या से हीन व्यक्ति नित्य अपवित्र और सभी कर्मों को करने के लिए अयोग्य होता है। संध्योपासना परम को गति मानते हुए व्यास जी कहते हैं:-

अन्यन्यचेतस: शान्त: ब्राह्मणा वेदपारगा: ।
उपास्यविधिवत् संध्या प्राप्ता: पूर्व परागतिम ।।

अथार्त- पूर्वकाल में वेद के पारंगत शांत ब्राह्मणों ने अनन्यमन से सन्ध्योपासना करके परम गति को प्राप्त किया था। जो दविजोतम संध्यावंदन को छेड़कर दूसरे धार्मिक कार्यों के लिए प्रयत्न करता है वह सहस्त्रो नरको में जाता है इसलिए सभी प्रयत्नों से व्यक्ति को संध्योपासना करनी चाहिए क्योंकि नित्य नैमित्तिक कर्मों के द्वारा व्यक्ति के व्यवहार में शुद्धता का संचार होता है और यदि शुद्धता सदाचार की ओर ले जाती है।

(ii) भोजनविधि:-

स्नानोपरांत संध्योपासना एवं पूजन आदि से निर्वित् होकर भोजन करना चाहिए। भोजन के संबंध में व्यक्ति को मुख्य बातों का ध्यान रखना चाहिए एक तो उच्छिष्ट भोजन नहीं करना चाहिए, भोजन प्रारंभ करने से पूर्व हाथ पैरों को शुद्ध जल से प्रक्षालित करना चाहिए तथा जल द्वारा आचमन कर मौन होकर भोजन करना चाहिए। भोजन के मुख्य बात है द्रव्य शुद्धी सदाचारपूर्वक अर्जित द्रव्य का ही भोजन मनुष्य को करना चाहिए। सात्विक भोजन मनुष्य की बुद्धि को पवित्र करता है तथा सत्यता से अर्जित धन से बना भोजन पवित्र होता है।

(iii) आचमन:-

जिस प्रकार शरीर की शुद्धि तथा पवित्रता के लिए स्नानादीकृत्यों का महत्व है, उसी प्रकार अभ्यंतर एवं पवित्रता के लिए पुराणों में आमचन का विशेष महत्व है। प्राय: दैनिक कार्यों में सामान्य शुद्धि के लिए प्रत्येक कार्य में आचमन करना आवश्यक है।

(iv) आचमन विधि–

पूर्व उतर या ईशान दिशा की ओर मुख करके आसन पर बैठ जाएँ शिखा बांधकर हाथ को घुटनों के भीतर रखते हुए निम्न मंत्रों से तीन बार आचमन करें-

ॐ केशवाय नम: ॐ नारायणाय नमः
ॐ माधवाय नम: ।

आमचन के बाद अंगूठे के मूल भाग से होठों को पोंछकर "ॐ हृषीकेशाय नमः" उचारण कर हाथ धोए। फिर अंगूठे से आंख, नाक तथा कान का स्पर्श करें। दक्षिण और पश्चिम की ओर मुख करके आचमन नहीं करना चाहिए तथा चलते-फिरते भी आचमन नहीं करना चाहिए।

(ख) मादक द्रव्यों का त्याग:-

संसार में मंदिरा ताड़ी चाय, कॉफी, कोको, भांग, अफीम, चरस, गांजा, तंबाकू, बीड़ी, सिगरेट, आदि जितनी भी मादक वस्तुएं है वे सब मनुष्य मात्र के लिए अव्यवहार्य है। इनका उपयोग मनुष्य को भीष्ण गर्त में डालने वाला होता है। पदमपुराण के अनुसार धूम्रपान करने वाले ब्राह्मण को दान तक देने वाला व्यक्ति नर्कगामी होता है। तथा धूम्रपान करने वाला ब्राह्मण ग्राम शूकर होता है।

पदम पुराण में यह भी कहा गया है कि मादक द्रव्यों के सेवन से व्यक्ति का आत्मिक पतन और शारीरिक हानि होती है। इसलिए किसी भी स्थिति में इन वस्तुओं का कदापि सेवन नहीं करना चाहिए।

(ग) जीवन में सत्य पालन:-

नैतिक आचरण का प्रथम सोपान सत्य वचन को माना गया है, सत्य का पालन करके ही व्यक्ति श्रेष्ठ आचारी बन सकता है। सत्यभाषण से व्यक्ति के मन में भरी कलुषता का नाश होता है और उसमें अद्भुद शक्ति का संचार होता है। बड़े-बड़े ऋषि महर्षियो ने सत्य का पालन करके ही संसार में ख्याति प्राप्त की है अतः मनुष्य को विपरीत से विपरीत परिस्थितियों में भी असत्य का आलम्बन नहीं लेना चाहिए क्योंकि असत्य चिरस्थाई है तथा सत्य शाश्वत है सत्य उस पारसकृत मणि के सामान है जिसको छुते ही पत्थर भी स्वर्ण का रूप धारण कर लेता है अर्थात सत्य का मार्ग अपनाकर दुर्जन लोग भी सज्जन बन जाते है। पुराणों में सत्य को दस-यम के अन्तरू निहित किया गया है –

सत्यं क्षमाजर्व ध्यान मानृशस्यमहिसनम ।
दमरू प्रसादो माधुर्य मृदुतेती यमादश ।

अर्थात सत्य, क्षमा, सरलता, ध्यान, क्रूरता, का आभाव हिंसा का सवर्था त्याग, मन और इंद्रियों का संयम, सदा प्रसन्न रहना, मधुर बर्ताव करना और सबके प्रति कोमल भाव रखना ये दस यम कहे गए हैं।

सत्य को ब्रह्म का स्वरूप मानते हुए कहा गया है –

सत्यमेव पर ब्रह्मा सत्यमेव परम् तप: ।
सत्यमेव परो यज्ञ: सत्यमेव परश्रुत्तम ।।

अथार्त सत्य पर ब्रह्मरूप है सत्य परम पद है। सत्य परम धर्म है सत्य सर्वोपरि है सत्य ही सत्य तप है सत्य अश्वमेध से भी बड़ा

यज्ञ, दान, पुण्य, और सर्वलोक प्रीतिकार कार्य है। सत्य में ही समस्त चराचर जगत प्रतिष्ठित है, सत्य से ही सूर्य, चंद्र, अग्नि, वायु, जल, पृथ्वी आदि सब कार्य चल रहे हैं।

सत्यपुता वदेद् वाणी मनरू पूतं समाचरेत ।।

अथार्त सत्य से पवित्र हुई वाणी बोले तथा मन से जो पवित्र जान पड़े उसी का आचरण करें।

सत्य जब वाणी में व्यक्त होता है तो वाणी सुभाषित कहलाती है और जब वाणी सत्य से रहित होती है तो काम-क्रोध राग-द्वेष आदी से युक्त होकर दुर्भाषित कहीं जाती है। अत: सत्य वाणी का महत्व बताते हुए कहा गया है-

सत्यं ब्रूयात प्रियं ब्रूयात न ब्रूयात सत्यमप्रियम
प्रिय च नानृत ब्रूयाद्वेष धर्मो विधियते ।।

अर्थात सत्य बोले, प्रिय बोले, अप्रिय सत्य कभी ना बोले, प्रिय भी असत्य हो तो न बोले। यह धर्म वेद शास्त्रों द्वारा विहित है।

(ड) मातृ - पितृ सेवा:-

माता पिता की सेवा करना व्यक्ति का परम धर्म है। विश्व के सभी धर्मों में माता-पिता की सेवा का महत्व बताया गया है और सदाचारी व्यक्ति अपने जीवन का परम कर्तव्य माता-पिता की सेवा को ही मानता है-

पितृ मातृ सम लोके नस्त्यन्य्द दैवत परम् ।
तस्मान सर्वप्रयत्नेन पूज्यते पितरों सदा ।।

अथार्त माता-पिता के समान इस संसार में कोई श्रेष्ठ देवता नही है। अतएव व्यक्ति को सभी प्रकार से उनकी पूजा करनी चाहिए। माता-पिता की पूजा पति की सेवा, सबके प्रति सम्मान भाव मित्रों से द्रोह न करना और विष्णु का भजन करना यह पांच महायज्ञ है। पहले माता-पिता की पूजा करके मनुष्य जिस धर्म की साधना करता है वह इस पृथ्वी पर सेंकडो यज्ञो तथा तीर्थयात्रा आदि के द्वारा भी दुर्लभ है।

पिता धर्मरू पिता स्वर्गरू पिता ही परम तप: ।
पितरि प्रीति भापन्ने प्रीयन्ते सर्वदिवता: ।।

अथार्त पिता धर्म है पिता स्वर्ग है और पिता ही सर्वोत्कृष्ट तपस्या है । पिता के प्रसन्न हो जाने पर संपूर्ण देवता प्रसन्न हो जाते हैं जिसके सद्गुणों से माता-पिता संतुष्ट रहते हैं उस पुत्र को प्रतिदिन गंगा स्नान का फल मिलता है क्योंकि-

"सर्वतीर्थ मयो माता सर्वदिवमय पिता"

अथार्त माता सर्वतीर्थमयी है और पिता संपूर्ण देवताओं का स्वरूप है इसलिए सब प्रकार से यत्नपूर्वक माता-पिता का पूजन करना चाहिए।

(च) सज्जनों की संगति:-

मनुष्य को सदा सज्जन लोगों के साथ परस्पर व्यवहार रखना चाहिए क्योंकि सज्जन लोग व्यक्ति को कभी कुमार्ग पर नहीं चलने देते सज्जनों की संगति का महत्व बताते हुए कहा गया है–

सदिभ संग प्रकुवीत सिद्धिकामरू सदानर ।
नासदिरिहलोक्राय परलोकाय वाहितम ।।

अतार्थ सिद्धि की कामना करने वाले मनुष्य को सज्जनों की संगति करनी चाहिए। असज्जनों की संगति से न तो इस लोक में कल्याण होता है न परलोक में ही।

(छ) अतिथि सत्कार:-

घर आए व्यक्ति का आदर सत्कार करना ही अतिथि सत्कार कहलाता है। विष्णु पुराण में ऋषि और्व द्वारा राजा सगर को गृहस्थ धर्म के सदाचारों के अंतर्गत अतिथि सत्कार का महत्व बताते हुए कहा गया है कि गृहस्थ को गो दोहन काल पर्यंत अथवा इच्छा अनुसार इससे भी कुछ अधिक तक अतिथि ग्रहण करने के लिए घर के आंगन में रहे यदि अतिथि आ जाए तो उसका स्वागत कर आसन देकर और चरण धोकर सत्कार करे फिर श्रद्धापूर्वक भोजन कराकर मधुर वाणी से प्रश्नोतर करके तथा उसके जाने के समय पीछे-पीछे जाकर उसको प्रसन्न करें जिसके पास कोई सामग्री न हो, जिसेसे कोई संबंध न हो जिसके कुलशील का कोई पता न हो और भोजन करना चाहता हो अतिथि का सत्कार किए बिना भोजन करने से मनुष्य अधोगति को प्राप्त होता है। गृहस्थ पुरुष को चाहिए कि आए हुए अतिथि के अध्ययन, गोत्र, आचरण और कुल आदि के विषय में कुछ भी न पूछकर हिरण्य गर्भ-बुद्धि से उसकी पूजा करे। हे नृप । दिन के समय अतिथि के लोट जाने से जितना पाप लगता है उससे आठगुना पाप सूर्यास्त के समय लौटने से होता है । अतः राजेंद्र सूर्यास्त के समय आए हुए अतिथियों का ग्रहस्थ पुरुष अपनी सामर्थ्य अनुसार अवश्य सत्कार करें, क्योंकि उसका पूजन करने में ही समस्त देवताओं का पूजन हो जाता है।" पुराणों में अतिथि सत्कार से संबंधित ब्रह्मपुराण में एक रोचक आख्यान कपोत और ब्याध का मिलता है । कपोत में घर आए अतिथि के सत्कार के लिए अपने आपको अग्नि को समर्पित कर दिया था । जो व्यक्ति अतिथि का सत्कार करते हैं वे परमधाम विष्णु को प्राप्त होते हैं इसलिए व्यक्ति का यह पवित्र धर्म है कि - भूख से पीड़ित मनुष्य को भोजन के लिए अन्न अवश्य देना चाहिए । ऐसे दीन व्यक्तियों को अन्न देने से महान पुण्य प्राप्त होता है । आतिथ्य सत्कार का महत्व बताते हुए कहा गया है कि –

भुमिमापस्तथा चान्न प्रिय वाक्यमनुतमम ।
आसनं वसनं पाद्य कोटील्ये न विवर्जितरू ।।
आत्मनो जीवनाथाय नित्यमेव करोति यरू ।
इत्येवं मोदतेसौ वै परत्रेह तथेव च ।।

अतार्थ घर की शीतल छाया पृथ्वी, जल, अन्न, आसन, वस्त्र या निवास स्थान और पद्य(पैर धोने के लिए जल) ये सभी वस्तुए जो व्यक्ति प्रतिदिन अतिथि को सरलता से अर्पित करता है वह इस लोक और परलोक में भी आनन्द को प्राप्त करता है।

(ज) तृष्णा का त्याग:-

तृष्णा रूपी विष बेल का मनुष्य को सवर्था त्याग देना चाहिए तृष्णा व्यक्ति को सद्मार्ग से कुमार्ग की ओर ले जाती है।

महर्षि भारद्वाज ने तृष्णा के बारे में कहा है किकृ" जब मनुष्य का शरीर जीर्ण हो जाता है उसके बल पक जाते है और दांत भी टूट जाते है किन्तु धन और जीवन की आशा बूढ़े होने पर भी जीर्ण नही होती वह सदा नयी की नयी ही बनी रहती है।

मनुष्य के आँख और कान जीर्ण हो जाते है पर मात्र तृष्णा ऐसी है जो तरुणी ही होती रहती है। तृष्णा को बारहसिंगा के सिंग के सदृश मानते हुए कहते है –

"यथा श्रिङ्ग रुरो: कार्य वर्धमाने च वधर्ते ।
तथेव तृष्णा वितेनवर्धमानेन वधति ।।

अथार्त जिस प्रकार बारहसिंगा के सींग शरीर बढनें के साथ-साथ बढ़ते है वैसे ही धन की वृद्धि के साथ-साथ तृष्णा बढती है।

इस प्रकार तृष्णा का कही और छोर नही है तृष्णा के साथ-साथ व्यक्ति में अनेक अवगुणों का समावेश हो जाता है। व्यक्ति धर्म से अधर्म के मार्ग की ओर उन्मुख हो जाता है।

अत: व्यक्ति को प्रयास यही करना चाहिए कि इस तृष्णा को बढ़ने ही न दिया जाये जब व्यक्ति में संतोष की स्थापना हो जायेगी तो तृष्णा रूपी बेल अपने आप कट जायेगी। अत: तृष्णा को नष्ट करने का एकमात्र उपाय है संतोष रूपी धन को अपनाना

(झ) अहिंसा दृ पालन :-

अहिंसा द्वारा अर्थात किसी भी व्यक्ति को मन वचन एवम कर्म द्वारा कष्ट ना पहुंचाना। अंहिसा का पालन जो व्यक्ति नहीं करता वह न तो योगी बन सकता है तथा न उसे ध्यान आदि में सफलता मिलती है एवम् न वह पूर्णरूप से धार्मिक या अध्यात्मिक ही कहा जा सकता है। अतेसदाचारी मनुष्य का जीवन के परम उद्देश्य तक पहुंचने का प्रथम सोपान अहिंसा ही है पुराणों में भगवान को प्रसन्न करने वाले आठ भाव पुष्पों में प्रथम पुष्प अहिंसा को माना गया है।

'अहिंसा प्रथम पुष्प: ।।'

नैतिक आचरण रूपी तरु का प्रथम पुष्प अहिंसा है। जो व्यक्ति किसी भी प्राणी का तन, मन, एव वचन से बुरा न ही करता है तथा न ही बुरा करने वाले का समर्थन करता है। वह श्रेष्ठ सदाचारी पुरुष मन जाता है और इश्वर भी उस व्यक्ति से प्रसन्न होते है।

व्यास जी ग्रहस्थ को अहिंसा का महत्व बताते हुए कहते है –

न हिंस्यात सर्वभूतानि नानृत वा वेदत क्वचित वा ।
ना हित ना प्रिय वाक्य न स्तेन: स्यात कदाचन ।।

(ट) धर्म पालन:-

व्यक्ति परिवार समाज, राष्ट्र और सम्पूर्ण विश्व के भरण पोषण संगठन सामजस्य एव एकमत्य का सम्पादन करने वाला एकमात्र पदार्थ है धर्म। धर्म का सम्यक ज्ञान व्यक्ति को अपौरूषेय वेद वाक्यों एव तदनुसारी पुराणादि आर्य धर्म ग्रंथो द्वारा ही सम्पन्न होता है।

धर्म को नैतिक आचरण का मूल मानते हुए कहा गया है-

"धर्मोस्य मूल धन्मस्य शाखा
पुष्प च कामरू फ्लमस्य मोक्ष: ।।

धर्म को व्यक्ति का सर्वस्व मानते हुए गरुड पुराण में कहा गया है कि-

धर्मरू पिता च माता च धर्मो नाथरू सुहत तथा
धर्मो भ्राता सखा चौव धर्मरू स्वामी परंतप ।।

धर्म परंतप है धर्म ही जीव व का माता पिता रक्षक सुह्द, भ्राता, सखा और स्वामी है ।

अतरू व्यक्ति को अपने वर्णानुसार और आश्रमानुसार धर्म का परित्याग कभी नही करना चाहिए जो व्यक्ति धर्म का परित्याग करता है उस पर भगवान भास्कर कुपित हो जाते है ।

कुपित: कुलनाशय देहरोग विविर्धे
भानुर्वे यतते तस्य नरस्य क्षणदाचर ।।

अथार्त धर्म का परित्याग करने वाले व्यक्ति पर सूर्य कुपित होकर प्राणी देह में रोग को बढ़ता है तथा व्यक्ति के कुल का विनाश प्रारम्भ हो जाता है। अतरू व्यक्ति को कभी भी धर्म का परित्याग नही करना चाहिए। जो व्यक्ति दान तपस्या सत्यभाषण और इन्द्रिय संयम के द्वारा निरंतर धर्माचरण करते है वे व्यक्ति स्वर्गगामी होते है।

(ठ) दान कर्म:-

"मनुष्य के जीवन में दान का अत्यधिक महत्व बतलाया गया है, यह एक प्रकार का नित्यक्रम है। मनुष्य को प्रतिदिन कुछ दान अवश्य करना चाहिए दान चाहे श्रद्धा से दे अथवा लज्जा से दे परन्तु दान किसी भी प्रकार अवश्य देना चाहिए। मानव जाती के लिए दान परम आवश्यक है। इस प्रसंग में पुराणों में एक कथा आती है दृ एक बार देवता, मनुष्य और असुर तीनो की उन्नति अवरुद्ध हो गयी अत: वे सब पितामह प्रजापति ब्रह्माजी के पास गये और अपना दु:ख दूर करने के लिए उनकी प्रार्थना करने लगे। ब्रह्मा जी ने तीनो को मात्र एक अक्षर का उपदेश दिया 'द'। स्वर्ग में भोगो के बाहुलय से भोग ही देवलोक का मुख मन गया है, अत: देवगन कभी वृद्ध न होकर सदा इन्द्रिय – भोग में लगे रहते है । उनकी इस अवस्था पर विचार कर प्रजापति ने देवताओ को 'द' के द्वारा दमन इन्द्रिय दृ दमन का उपदेश दिया । असुर स्वभाव से ही हिसावृति वाले होते है, क्रोध और हिंसा उनका नित्य का व्यापार है अतरू प्रजापति ने उन्हें इस दुष्कर्म से छुड़ाने के लिए 'द' के द्वारा जीवमात्र पर 'दया' करने का उपदेश दिया। मनुष्य कर्मयोनी होने के कारण सदा लोभवश कर्म करने करने और अर्थसंग्रह में लगे रहते है, इसलिए प्रजापति ने लोभी मनुष्यों को 'द' के द्वारा उनके कल्याण के लिए 'दान' करने का उपदेश दिया अत: मानव को अपने अभुद्य के लिए दान अवश्य करना चाहिए। दान हमेशा न्यायोपार्जित धन से ही करना चाहिए क्योंकि न्याय से उपार्जित किये हुए का दान ही सर्वश्रेष्ठ दान माना जाता है। न्यायपूर्वक अर्जित किये हुए धन का दशमांश बुद्धिमान पुरुष को दान कर्म में ईश्वर प्रसन्नता के लिए लगाना चाहिए।

(ढ) गो सेवा:-

गों महात्म्य से संस्कृत वाड्मय भरा पीड़ा है । वेद भगवान ने कहा है कि "गावो विश्वस्य मातररू" अर्थात गे विश्व की माता है । गों सेवा के द्वारा ही रानी सुदक्षिणा का वन्ध्यत्व दूर होकर महाराजा दिलीप को संतान प्राप्त हुई थी । पुराणों में गो सेवा के अनेक आख्यान प्राप्त होते है । वसिष्ठजी ने नंदिनी नामक गों की रक्षार्थ अपने सो पुत्रो को खोया । पुराणों में गो सेवा की महिमा बताते हुए कहा है की जो मनुष्य गोचर भूमि छोड़ता है वह कभी स्वर्ग से नीचे नही गिरता गो सेवा करने वाले व्यक्ति को श्राद्ध कर्म के सदर्श फल मिलता है । गोचर भूमि की महिमा बताते हुए व्यास जी कहते है दृ

गोचार यथाशक्ति यों वे त्यजति हेतुना ।
दिने दिने ब्रम्हाभोज्य पुण्य तस्य शताधिकम ।।

अथार्त गोचर भूमि वाले मानव को सौ से भी अधिक ब्राह्मणों को भोजन कराने का पुण्य मिलता है ।

निष्कर्ष

पुराणों में वर्णित नैतिक आचरण के आयाम नामक शोध पत्र के द्वारा भारतीय संस्कृति में वर्णित नैतिक आचार को बताया गया है वर्तमान समय के कली - कलुषित वातावरण में यह नैतिक आयाम सन्मार्ग की ओर अग्रसर होने में प्रेरित करते हैपुराण नैतिक अचार के वे आधार स्तंभ है जिन पर चलकर मनुष्य ने नि श्री को प्राप्त करता है पुराणों में प्रतिपादित यज्ञ धर्म गोसेवा सत्याचरण इत्यादि श्रेष्ठ नैतिक उपदेश है अर्थात जिस प्रकार सूर्य संपूर्ण लोक को प्रकाशित करता है उसी प्रकार भगवान व्यास द्वारा विरचित पुराणों ने संपूर्ण प्राणियों का कल्याण किया है

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. अग्निपुराणम्, आचार्य बलदेव उपाध्याय, चौखंबा संस्कृत संस्थान, वाराणसी
2. कूर्म पुराणम, श्रीराम शर्मा आचार्य कृत हिंदी टीका, चौखंबा संस्कृत संस्थान, वाराणसी
3. मार्कंडेय पुराणम, डॉक्टर सत्यव्रत सिंह हिंदी टीका सहित, चौखंबा संस्कृत संस्थान, वाराणसी
4. लिंग पुराणम (संक्षिप्त), श्रीराम शर्मा आचार्य कृत हिंदी टीका, चौखंबा संस्कृत संस्थान वाराणसी
5. शिव पुराण अगला अनुवाद/जेएल शास्त्री, चौखंबा संस्कृत संस्थान, वाराणसी
6. पदम् पुरनम, मूलमत्र, चौखंबा संस्कृत संस्थान, वाराणसी
7. अस्टादशपुराण दर्पण संक्षिप्त, संकलित श्री पंडित ज्वाला प्रसाद मिश्र, राष्ट्रीय संस्कृत संस्थान नई दिल्ली
8. श्री स्कंद महापुराणम, भूमिका लेखक-राजेंद्र नाथ शर्मा, राष्ट्रीय संस्कृत संस्थान नई दिल्ली
9. पुराण तत्व मीमांसा, श्री कृष्ण मणि त्रिपाठी, चौखंबा विद्याभवन, वाराणसी
10. पुराण विमर्शरू आचार्य बलदेव उपाध्याय, चौखंबा विद्याभवन वाराणसी